International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 11 Issue 03, March- 2021
ISSN: 2249-7382 | Impact Factor: 8.018|
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

भारतीय दर्शन एवं ज्ञान चिंतन परम्परा

डॉ.पी.डी. शर्मा (प्राचार्य– रामकृष्ण इंस्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन, रायपुर)

डॉ.सुनीला शर्मा (विभागाध्यक्ष– रामकृष्ण इंस्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन, रायपुर)

सारांश :–

विश्व में भारतीय दर्शन समृद्ध एवं उच्चकोटि का है। जिसकी पृष्ठभूमि में हमारे ज्ञान, चिंतन, परम्परा और आचरण फले–फुले है। इसमें पंचतत्व निर्मित मानव शरीर के उद्‌भव व सदगति का विरूपण एवं भारतीय दर्शन का संक्षिप्त परिचय के साथ स्त्रोत, वर्ण व्यवस्था एवं उसमें निहित दायित्वों का निर्वहन करना तथा जन्म–मृत्यु की मूल अवधारणा की पृष्ठभूमि में निहित मूलभाव का परिचय, मानव समाज की आस्तिकता का ज्ञान एवं जीवन में नारी के महत्व का प्रतिपादन परिलक्षित है।

वेदांत परिचय :–

भारतीय ज्ञान का क्षेत्र बहुत व्यापक एवं विस्तृत है इसकी पृष्ठभूमि में ज्ञान का प्रसार विभिन्न क्षेत्रों जैसे आध्यात्म, संस्कृति, परम्परा, शिक्षा, स्वास्थ्य इत्यादि में व्यापक रूप से हो सकता है। आध्यात्म के क्षेत्र में यह ज्ञात है कि सृष्टि की रचना मूलतः भगवान विष्णु के ओंकार शब्द से प्रारम्भ होती है। जिन्होंने ब्रम्हा एवं शिव के साथ अखिल ब्रम्हाण्ड को साकार किया है। इस दृष्टिकोण से यदि हम परिचित है तो हमें ज्ञात होना चाहिए कि सृष्टि की रचना विष्णु द्वारा आदेशित ब्रम्हा जी ने प्रारम्भ की। यह उल्लेखनीय है कि सृष्टि में कोई भी प्राणी अजर–अमर नहीं है। इसलिए भगवान शिव के नियंत्रण में प्राणियों के अंत का उल्लेख किया गया है। वैसे मानव जाति की उत्पत्ति महाजल प्लावन के समय बिल्व पत्र पर सुसुक्त में स्थित बालक मनु से हुई है। तब से हम इस क्षेत्र में मनु और सतरूपा को प्रथम माता–पिता के रूप में जानते है।

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 11 Issue 03, March- 2021
ISSN: 2249-7382 | Impact Factor: 8.018|
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

सृष्टि की उत्पत्ति की अवधारणा :–

तदन्तर सृष्टि का प्रभाव आगे बढ़ता गया इसी क्रम में विभिन्न ऋषियों द्वारा वेदों की रचना की गई। चार वेद में ऋग्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, यजुर्वेद। इन वेदों में निहित ज्ञान का संबंध जीवन के विभिन्न आयामों से है। इन वेदों की व्याख्या उपनिषदों के रूप में हुई। जिससे मानव जाति को जीवन के विभिन्न क्षेत्रों से संबंधित ज्ञान की प्राप्ति होती है। ऋग्वेद में प्रकृति के विभिन्न क्षेत्रों में निहित ईश्वर की शक्तियों का उल्लेख है। ज्ञात हो कि प्रकृति के विभिन्न क्षेत्रों को ईश्वरीय शक्ति के रूप में अभिहीत किया गया है। यथा सृष्टि रचना के लिए आवश्यक पंच तत्वों का मूल प्रकृति ही है। इन क्षेत्रों को हम क्षिति, जल, पावक, गगन एवं समीर के रूप में जानते है। इन पंच तत्वों से सृष्टि की उत्पत्ति हुई है–

''क्षिति, जल, पावक, गगन समीरा।

पंचतत्व रचित अधम शरीरा।।''

प्राचीन शिक्षा व्यवस्था :–

दर्शन शास्त्र के अनुसार अनेक मतों का उल्लेख है जिसमें द्वैत एवं अद्वैत प्रमुख है। अद्वैत शाखा की परम्परा के अनुसार एकमेव परमात्मा माना गया है। भारतीय दार्शनिकों ने द्वैत की भी कल्पना की। जिसके अनुसार परमात्मा एवं आत्मा को द्वैत की धारणा में समाहित किया गया– ''एको अहं द्वितियों नास्ति'' का उल्लेख एकेश्वर वाद में है। कहा गया है कि '' ब्रम्ह सत्यं जगन मिथ्या '' इसके अंतर्गत ब्रम्ह को ही सत्य माना गया है। शेष जो भी है वो माया के द्वारा रचित है। हमारे ज्ञान चक्षु के सामने जो माया का पर्दा है, उसके कारण हम दृश्य वस्तुओं का अनुभव करते है, जो पूर्णतः मिथ्या है। जबकि द्वैत परम्परा में परमात्मा के अतिरिक्त आत्मा और परमात्मा दोनों अमर है और आत्मा परमात्मा का अंश है। भारतीय संस्कृति के प्रारम्भ में ऋषि मुनियों ने आध्यात्म से संबंधित विभिन्न ग्रंथों की रचना की है। जिनमें उपरोक्त चार वेद है। प्राचीन काल में यहां (भारत) गुरूकुल परम्परा से ऋषि मुनियों द्वारा समाज के जिज्ञासु छात्रों को आश्रमरूपी विद्यालयों में ज्ञान प्रदान किया जाता था। यह संपूर्ण ज्ञान कार्य और अनुभव पर आधारित था। इसका क्षेत्र व्यापक था जिसमें जीवन यापन, आत्म एवं स्वदेश की

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 11 Issue 03, March- 2021
ISSN: 2249-7382 | Impact Factor: 8.018|
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

रक्षा संबंधित विभिन्न अस्त्रों–शस्त्रों का भी प्रत्यक्ष अभ्यास होता रहा है। यहां के पुराणों में आधारित भारतीय ज्ञान परम्परा के साथ जीवन शैली का भी उल्लेख है। जिसके प्रमाण श्रीमद्भगवत, वाल्मीकी रचित रामायण, विष्णु पुराण, धन्वंतरी का आयुष विज्ञान आदि है।

वर्ण व्यवस्था :–

कालांतर में समाज के सुचारू संचालन के लिए वर्णप्रथा का प्रारंभ हुआ। जिसके अंतर्गत ब्राम्हण, क्षत्रिय, वैश्य, शुद्र इन चार वर्गों में समाज को विभाजित किया गया। ज्ञान के प्रसार का क्षेत्र ब्राम्हणों को दिया गया, समाज की रक्षा हेतु क्षत्रिय, जो अस्त्रों–शस्त्रों का गहन ज्ञान रखते थे, उनको दिया गया। संपूर्ण समाज के भरण पोषण हेतु वैश्य वर्ग को दायित्व सौंपा गया तथा विभिन्न क्षेत्रों में मनुष्य की सेवा के लिए शूद्र वर्ग को उत्तरदायित्व दिया गया।

समाज की सापेक्ष चिंतन परम्परा :–

भारत उत्सवों का देश है, इसलिए हम अपने जीवन को सुखमय बनाने के लिए जन्म से लेकर मृतक क्रिया कर्म तक विभिन्न उत्सवों का आयोजन करते है। भारतीय संस्कृति में सदा सापेक्ष रूप में जीवन को देखा गया है। कही पर भी निषेध या कष्ट को महत्व नही दिया गया है। भारत में दशहरे के समय में लंका विजय को असत्य पर सत्य की विजय मानते है। इसी क्रम में जितने भी समाज द्रोही एवं अत्याचारी शासकों का अंत हुआ। उसे असत्य पर सत्य की विजय के रूप में देखा गया।

वर्णाश्रम धर्म व्यवस्था :–

मनुष्य जीवन को भी चार आश्रमों में विभाजित किया गया है– जिसके अंतर्गत ब्रम्हचर्य आश्रम, गृहस्थ आश्रम, वानप्रस्थ आश्रम, सन्यास आश्रम है। प्रथम आश्रम ज्ञानार्जन के लिए है जिसके अंतर्गत बालविवाह को प्रतिबंधित किया गया है। सैद्धांतिक, व्यवहारिक, आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करने के पश्चात् बालक को गृहस्थ में प्रवेश करने का अधिकारी माना गया है। गृहस्थ के रूप में अपने सामाजिक एवं पारिवारिक दायित्वों का निर्वहन करते हुए व्यक्ति को गृह त्याग नहीं करना

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 11 Issue 03, March- 2021
ISSN: 2249-7382 | Impact Factor: 8.018|
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

है। तृतीय आश्रम को वानप्रस्थ आश्रम कहा जाता है अर्थात् 50 वर्ष की आयु के पश्चात् वन में रहकर समाज के जिज्ञासु बालकों को व्यावहारिक शिक्षा प्रदान करने का प्रावधान है। यहां व्यक्ति अपनी धर्मपत्नि के साथ वन में कुटिया बनाकर रहते थे। वे ही आश्रम विद्यालय के रूप में प्रयुक्त होते थे। अंत में जीवन में वैराग्य की स्थिति आने पर सन्यास लेकर एकांतवास करते थे। विभिन्न तीर्थों की यात्रा करते हुए भारत दर्शन का कार्य पूर्ण होता था।

जीवन–मृत्यु :–

भारतीय परम्परा में कहा गया है कि जिस तरह रात्रि के पश्चात् दिवस का आगमन होता है अंधकार के पश्चात् प्रकाश का आगमन होता है वैसे ही जीवन में दुख के पश्चात् सुख का आगमन होता है। इसलिए कहा जाता है कि चक्रवत परिवर्तन्तें दुखानि च सुखानि च अर्थात् जीवन में दुख व सुख दोनों का अनुभव व्यक्ति को होता है। इसी क्रम में मृत्यु को जीवन का अंत मानकर निश्चित कहा गया है अर्थात् जन्म लिया है उसका अंत भी मृत्यु के रूप में होना ही है। भारतीय आध्यात्म के अनुसार जीवन और मृत्यु का निश्चित क्रम है और आत्मा का इन स्थितियों से साक्षात्कार होता है। जब आत्मा परमात्मा में विलिन होती है उसे मृत्यु कहा गया है। यह जीवन का अंत है आत्मा का नहीं इसलिए आत्मा को अजर अमर माना गया है।

भारतीय समाज की आस्था :–

नास्तिक–आस्तिक अतः सम्पूर्ण विश्व में भारतीय संस्कृति को सर्वोत्तम की कोटि में रखा गया है जिसे सम्पूर्ण विश्व स्वीकार करता है। भारत में आस्तिक श्रेणी के लोग है जिनकी आस्था ईश्वर में है। जहां पर नास्तिकता का कोई स्थान नहीं है। ईश्वर के संबंध में भारतीय धारणा मूलरूप में यही है कि ईश्वर अरूप है। मनुष्य ने अपनी कल्पना के द्वारा विभिन्न अवतारों का उल्लेख कर ग्रथों की रचना की है और इसके पात्रों को मुख्यतः अपने अनुरूप से ही चित्रित किया है। जबकि ब्रम्ह वादी ईश्वर को निर्विकार मानते है। इसलिए शिव की ही कल्पना की गई है और लिंग पूजा का प्रावधान किया गया है। यथार्थ में भगवान का अर्थ ऐश्वर्यवान होता है। रामकृष्ण आदि भिन्न अवतारों को हमनें मनुष्य के रूप में

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 11 Issue 03, March- 2021
ISSN: 2249-7382 | Impact Factor: 8.018|
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

चित्रित किया है। यहां तक की देवादि देव शिव को हम शंकर पार्वती के रूप में पाते है। द्वादश ज्योर्लिंग की कल्पना में शिव की ही अवधारणा है।

नारी समाज का महत्व :–

भारतीय संस्कृति में नारी तत्वों को आदिशक्ति के रूप में देखा जाता है। अतः हमारे यहां शक्ति पीठों की स्थापना है। नारी शक्ति को प्रणम्य रूप में माना जाता है एवं इसे आध्यात्म में सर्वोच्च स्थान प्राप्त है और कहा भी गया है कि ''यत्र नार्यस्तु पूज्यंते, रमन्ते तत्र देवता।'' इस तरह भारत में प्रचलित संस्कृतियों को विश्व में श्रेष्ठ माना गया है। इसका प्रमाण अमेरिका के शिकागों में आयोजित सर्वधर्म सम्मेलन में स्वामी विवेकानंद जी के द्वारा दिये गये प्रवचन में प्रमाणित किया जा चुका है।

सारांश :–

भारतीय दर्शन अपनी पूर्णता में सम्पूर्ण ज्ञान, चिंतन की परम्परा को समेटे हुये है। इसमें वेदांत व्याख्या सृष्टि की अवधारणा, शिक्षा व वर्ण व्यवस्था समाज, धर्म, जीवन–मृत्यु सब पर विस्तार से चिंतन कर मानव जीवन को सम्पूर्णता की ओर ले जाने का महत्वपूर्ण कार्य किया गया है। मानव जीवन की सभी समस्याओं को सुलझाने के सूत्र सरलतम किए गए है। अज्ञान के अंधेरें में इसकी रोशनी के द्वारा प्रवेश कर समाज और मानव जीवन के लिए एक नयी रोशनी का दर्शन दिया जा सकता है।